डा० कुमारी चम्पा
स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग
महाराजा कॉलेज, आरा

घनानन्द (सप्रसंग व्याख्या)

"तब तो छवि पीवत जीवत है, अब सोचन लोचन जात जरे।
हिय-पोष के तोष सु प्राण पले, बिललात महा दुख-दोष भरे।
घनानंद मीत सुजान बिना, सब ही सुख साज-समाज टरे।
तब हार पहार से लागत है, अब आनि कै बीच पहार परे।"

प्रसंग :— प्रस्तुत पद घनानन्द द्वारा रचित है। इसके माध्यम से कवि संयोगावस्था एवं वियोगावस्था में अंतर स्पष्ट करते हैं।

व्याख्या :— ~~संयोग के दिनों में~~ विरही घनानन्द संयोग एवं वियोग में अंतर स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि पहले संयोगावस्था में प्रेयसी की छवि का अमृत पान करके नेत्र जीते थे अब वियोगावस्था में वे ही विष ज्वाला से जल रहे हैं। निरंतर मैं जिस रूप सौन्दर्य का पान करता था, वह अमृत के समान नव जीवन प्रदान करता था। अतः वह समय बड़े सुख में बीत रहा था। पर प्रेयसी के चले जाने पर मैं उनकी चिंता करता हूँ, प्रतीक्षा में पलक पाँवड़े बिछाए रहता हूँ। लगता है मेरे नेत्र जल रहे हैं। संयोगावस्था में मैं प्रिया का भरपूर प्यार पाता था, प्रेम का प्याला पी-पीकर अपार संतोष और तृप्ति का अनुभव होता था। ~~अब~~ उनके वियोग में मेरे ये प्राण बहुत व्याकुल हैं। पहले प्राण प्रेम के पोषण से पुष्ट हो रहे थे अब अपार कष्ट और क्लेश सह रहे हैं। अब प्राण दुःख में जल रहे हैं। अपने प्रियतम की अनुपस्थिति में जीवन का सारा सुख नष्ट हो गया है।

Date

अब जीवन में कोई सुख नहीं रह गया है। समय काटना दूभर हो गया है। सब प्रकार के सुख वियोग में तिरोहित हो गए हैं। संयोग में नैकट्य इतना था कि आलिंगन में हार पहाड़ की भाँति बाधक होते थे उनका व्यवधान हटाकर हटाकर आलिंगन होता था, पर अब हार के व्यवधान की चर्चा ही व्यर्थ है, बल्कि दोनों के बीच पहाड़ों का अंतर है। संयोगावस्था में वक्ष पर पड़ी हुई मुक्ता माला मिलन में बाधा डालती थी, वह बाधित लगती थी, अब उसके और मेरे बीच वियोग पर्वतमाला की तरह व्यवधान बनकर खड़ा है। हम मिल नहीं पा रहे हैं।

विशेष :- (1) विरहिणी की व्यथा का मार्मिक वर्णन
(2) यह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि संयोग के दिनों में जो चीजें सुख देती है वही वियोग में पीड़ा पहुँचाती है।
(3) अनुप्रास, उपमा एवं यमक अलंकार का प्रयोग किया गया है।